लोकमत समाचार
रविवार, 21 फरवरी 2015

मातृभाषा हमारा मानव अधिकार है

गिरीश्वर मिश्र
कुलपति, महात्मा गांधी
अंतर्राष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय

भाषा की सत्ता उसके प्रयोग से बनती है और उससे आदमी इस कदर जुड़ जाता है कि वह उसके अस्तित्व की निशानी बन जाती है. इसी की याद दिलाने के लिए यूनेस्को ने 21 फरवरी को 'मातृभाषा दिवस' घोषित किया है. इसकी एक ऐतिहासिक पृष्ठभूमि है जिसे जान लेना जरूरी है. आज के 'पाकिस्तान' बनने के पहले ही यह बहस छिड़ गई थी कि वहां की राष्ट्रभाषा क्या होगी? उस बहस की परवाह किए बगैर पाकिस्तान के तत्कालीन प्रधानमंत्री लियाकत अली खान ने 1948 में उर्दू को राष्ट्रभाषा घोषित कर दिया. पूर्वी पाकिस्तान में इसकी जबर्दस्त प्रतिक्रिया हुई. वहां बांग्ला को राजभाषा बनाने की मांग को लेकर आंदोलन छिड़ गया. ढाका विश्वविद्यालय के छात्रों ने 'राष्ट्रभाषा संग्राम परिषद' का गठन कर 11 मार्च 1949 को 'बांग्ला राष्ट्रभाषा दिवस' मनाने का ऐलान कर दिया. उस ऐलान के साथ ही विरोध में सड़क पर उतरे आंदोलनकारियों पर लाठी चार्ज हुआ और आंसू गैस के गोले छोड़े गए. इससे भाषा आंदोलन दबने के बजाय और तेज हुआ और तीन वर्ष बीतते न बीतते छात्रों का वह संघर्ष वृहद राजनीतिक आंदोलन में तब्दील हो गया. 21 फरवरी 1952 को ढाका में कानून सभा की बैठक होनी थी. उस सभा में भाग लेनेवाले प्रतिनिधियों को ज्ञापन देने का फैसला भाषा आंदोलनकारियों ने किया. वे जैसे ही ढाका विश्वविद्यालय से निकलकर राजपथ पर आना शुरू किए; पुलिस ने फायरिंग शुरू की जिसमें आधिकारिक तौर पर चार लोग मारे गए. इस घटना के बाद पूर्वी पाकिस्तान के लोग हर वर्ष 21 फरवरी को 'भाषा शहीद दिवस' के रूप में मनाने लगे. यह दिन जीवन संग्राम की प्रेरणा का प्रतीक बन गया. भाषा से संस्कृति, संस्कृति से स्वायत्तता और स्वायत्तता से स्वाधीनता की मांग उठी. इस तरह पूर्वी पाकिस्तान के भाषा आंदोलन ने बांग्लादेश मुक्ति संग्राम का रूप लिया और एक नए देश का जन्म हुआ. बांग्लादेश के भाषा शहीद दिवस को संयुक्त राष्ट्र संघ ने भी कुछ वर्ष पहले 'मातृभाषा दिवस' की मान्यता दी.

मातृभाषा दिवस विशेष

मातृभाषा से आदमी की एक खास पहचान बन जाती है. 'अंग्रेजी', 'जर्मनी', 'चीनी', या फिर 'बंगाली', 'मैथिली', और 'पंजाबी' जैसे शब्द जितना भाषा के साथ जुड़े हैं उतनी ही शिद्दत से समुदायविशेष का भी बोध कराते हैं. भाषा को आदमी गढ़ता जरूर है पर यह भी उतना ही सही है कि भाषा आदमी को रचती है और उसमें तमाम विशेषताओं, क्षमताओं, मूल्य दृष्टियों को भी स्थापित करती है. ऐसा होना स्वाभाविक है क्योंकि जीवन के सारे व्यापार- अपना दुःख-दर्द, हास-परिहास, लाभ-हानि, यश-अपयश सब कुछ हम भाषा के जरिए खुद महसूस करते हैं और दूसरों को भी उसका अहसास दिलाते हैं. भाषा के साथ यह रिश्ता इतना गहरा और अटूट हो जाता है कि वह जीवन का ही पर्याय बन जाता है. स्वाभाविक परिस्थितियों में जन्म के साथ हर बच्चे को एक खास तरह की ध्वनियों और उनसे बनी भाषा का वातावरण पहले से तैयार मिलता है. उससे भी महत्वपूर्ण यह है कि भाषा के उपयोग का उपकरण भी बच्चे के शरीर के अन्य अंगों की तुलना में ज्यादा तैयार और सक्रिय रहता है. एक तरह से भाषा के लिए तत्परता या 'रेडीनेस' से लैस हो कर ही इस दुनिया में बच्चे का पदार्पण होता है. उसकी पहली भाषा मातृभाषा होती है. सोते-जागते बच्चे को हर समय मातृभाषा की गूंज सुनाई पड़ती है. उस भाषा का सीखना सहज ढंग से और एक तरह से अनायास होता है. वैज्ञानिक अध्ययन बताते हैं कि आठ महीने की आयु में ही बच्चा बहुतेरे ध्वनि रूपों को ग्रहण करने में सक्षम हो जाता है. बारह महीने का होते होते पहला शब्द बोलता है पर उस समय भी लगभग पचास शब्दों को समझता है. 18 महीने में वह 50-60 शब्द बोलने लगता है पर उसके दुगुने तिगुने शब्दों को समझता है. इस तरह लिखने-पढ़ने यहां तक कि बोलने की क्षमता आने के पहले ही बच्चा उस भाषा के अनेकानेक शब्दों के अर्थ को समझने लगता है. यह स्वाभाविक रूप से होता है.

वस्तुतः मातृभाषा में सीखना सरल होता है क्योंकि बच्चा उस भाषा के साथ सांस लेता है और जीता है. वह उसकी अपनी भाषा होती है और उस भाषा को व्यवहार में लाना उसका मानव अधिकार है. परंतु भारत में राजनैतिक, आर्थिक और तकनीकी कारणों से भाषा और मातृभाषा का सवाल उलझता ही चला गया. आज की कटु वास्तविकता यही है कि भाषाई साम्राज्यवाद के कारण अंग्रेजी प्रभु भाषा के रूप में स्थापित है और आज के प्रतिस्पर्धा और वैश्वीकरण के जमाने में हम उसी का रुतबा स्वीकार बैठे हैं.

इस प्रसंग में यह जान लेना जरूरी है कि अंग्रेजी का हौवा केवल भ्रम पर टिका है. अनेक देशों में वैज्ञानिक अध्ययन यह स्थापित कर चुके हैं कि मातृभाषा में सीखना प्रभावी सीखने का आधार होता है. आज 'सब के लिए शिक्षा' का लक्ष्य सामाजिक विकास के लिए महत्वपूर्ण माना जा रहा है. इस लक्ष्य की प्राप्ति मातृभाषा के द्वारा ही संभव होगी. यूनेस्को द्वारा और अनेक देशों में हुए शोध से यह प्रमाणित है कि छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि, दूसरी भाषा की उपलब्धि, चिंतन की क्षमता, जानकारी को पचा कर समझ पाने की क्षमता सृजनशक्ति और कल्पनाशीलता इनसे उपजने वाला और अपनी सामर्थ्य का बोध मातृभाषा के माध्यम से ही उपजता है. मातृभाषा को आरंभिक शिक्षा का माध्यम न बनाना एक गंभीर सामाजिक और सांस्कृतिक चुनौती है जिसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती.